P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9*(Part-1) May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

पर्यावरण संरक्षण का चैतन्य–वैदिक ऋषियों की दृष्टि में

अनीता सेनगुप्ता
एसोसिएट प्रोफेसर,
संस्कृत विभाग,
ईश्वर शरण पी0जी0 कॉलेज,
प्रयागराज, उ0प्र0, भारत

सारांश

वेद निरूपित पर्यावरण संरक्षण स्वास्थ्य एवं विकसित जीवन का अन्यतम निदर्शन है।, जिसका वर्तमान कालीन समाज में हनन हो रहा है, जिसको संरक्षित करने हेतु वैदिक ऋचाओं से ज्ञान प्राप्त करना चाहिए, जिससे जीवन संचालन सुचारु रूप से हो सके।

मुख्य शब्द : वायुसंरक्षण, आकाशसंरक्षण, जलसंरक्षण

प्रस्तावना

मनुष्य के चारों ओर स्थावरजङ्गात्मक जो कुछ भी नैसर्गिकावरण है, उसे प्रकृति या पर्यावरण कहते हैं। पर्यावरण विज्ञान का सीधा सम्बन्ध मानव–सभ्यता एवं संस्कृति से है। भारत की सभ्यता जितनी पुरानी है, पर्यावरण–विज्ञान भी उतना ही पुराना है। भारतीय दार्शनिकों ने प्रकृति को ईश्वर कहा है, अतः प्रकृति ईश्वरीय स्वरूप का प्रतिनिधित्व करती है। इसी प्रकृति का सौम्य रूप मानव की रक्षा करता है, तो रौद्र रूप उसका विनाश करता है।

सृष्टि के आरंभ में ही परम रचयिता ब्रह्मा ने सृष्टि में संतुलन बनाए रखने हेतु जिस प्रकार से सृष्टि की रचना की, उससे परमात्मा की पर्यावरण–संरक्षण के प्रति सजगता परिलक्षित होती है–

1. परम पिता ब्रह्मा ने वायु प्रदूषण को दूर करने के लिए सर्वप्रथम 20 लाख प्रकार के वृक्षों की रचना की– ''स्थावरं विशंतेर्लक्षम्''।
2. जल–प्रदूषण को दूर करने के लिए नौ लाख प्रकार के जल–जीवों की रचना की– ''जलचरं नवलक्षकम्।''
3. पृथिवी की उर्वरा शक्ति की रक्षा हेतु ग्यारह लाख कीड़ों की रचना की– ''कृमिंश्च रूद्रलक्षम्।''
4. वनों की रक्षा हेतु चार लाख वन्य जीवों की रचना की– ''चतुर्लक्षं च वानराः।''
5. सृष्टि के संतुलन हेतु तीस लाख प्रकार के पशुओं की रचना की' ''त्रिशदलक्षं पशूनां च।''
6. वायुमण्डल तथा वातावरण की शुद्ध हेतु दस लाख पक्षियों की रचना की। तत्पश्चात् मानव की रचना की– (स्कन्द पुराण के अनुसार)[1]।

आज इसी मानव ने औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप मानवीय सभ्यता तथा संस्कृति का तीव्रगति से विकास तो कर लिया, किन्तु साथ ही इस क्रान्ति से प्रकृति को विकृत भी कर दिया है, अतः आज पर्यावरण समस्या विश्व स्तरीय चिन्ता का विषय हो गया है। पर्यावरण–प्रदूषण का परिणाम इतना भयावह है कि आजोन गैस की परत, जो कि हमारी पृथिवी से 35 कि0मी0 दूरी पर बनी हुई है और जो सूर्य की अल्ट्रावायलेट विकिरण का 99 प्रतिशत अवशोषण कर लेता है तथा प्रत्येक जीव जन्तु की सूर्य की भीषण ताप के प्रज्ज्वलन से रक्षा कर सकती है, वैज्ञानिक उसी ओजोन गैस में छिद्र होने की बात कर रहे हैं।

अतः अब हम सभी के लिए ये आवश्यक हो गया है कि वैदिक काल की भांति प्रकृति के साथ अपना भावनात्मक तथा रागात्मक सम्बन्ध बनायें, क्योंकि प्रकृति में भी तो अन्तश्चेतना होती है, इन्हें भी सुख–दुख का बोध होता है, तमोगुण के प्राबल्य से ये अपनी वेदना को उस रूप में प्रकट नहीं कर पाते, जिस रूप में मानवादि प्राणी उसे व्यक्त करते हैं–

तमसा बहुरूपेण वेष्टिताःकर्महेतुना।
अन्तः संज्ञा भवन्त्येते सुखदुःखसमन्विताः।।[2]

प्राचीनऋषियों की भांति द्यु–भू, अनतरिक्ष, जल, औद्यधि तथा वनस्पतियों से प्रार्थना करें कि वे प्रदूषण मुक्त होकर हमारे लिए सुख–शांति प्रदान करें–

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधय शान्तिः वनस्पतयः शान्तिः।[3]

अधुना प्रकृति प्रकुपित हो चुकी है, तभी तो कभी सुनामी तो कभी भूकम्प तो कभी भू–स्खलनादि रूप में प्रकृति अपना रोष व्यक्त कर रही है।

अथर्ववेद में चेतावनी दी गई है कि पृथिवी के मर्म स्थानों को क्षति न पहुंचाएँ अर्थात् पृथ्वी के जिस भाग को खोदते हैं (रत्न, कोयला, पैट्रोलादि प्राप्त करने के लिए) उस रिक्त हुए स्थान को पुनः पूर्ण करें, अन्यथा भूस्खलनादि की संभावना बढ़ जाती है–

यत्ते भूमे विखनामि क्षिप्रं तदपि रोहतु।
मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयमर्पिपम्।।[4]

वायु संरक्षण

पर्यावरण के संघटक तत्त्वों में वायु तत्त्व का सर्वाधिक महत्त्व है। वेद में वायु को 'विश्वभेषज' कहा गया है–

त्वं हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयसे[5]

प्राण वायु मनुष्य में जीवन शक्ति का संचार करता है तो अपान वायु सभी दोषों को मल रूप में शरीर से बाहर करता है। वेदों में वायु को शुद्ध करने का उपाय यज्ञ रूप में वर्णित है। विविध वैज्ञानिक अनुसंधानों से यह सिद्ध हुआ है कि अग्निहोत्र याग से इथिलोन आक्साइट (Ethylone Oxide), प्रोपीलोन (Propylone), एसीटीलोन (Acytylone), आदि गैंसें निकलती हैं, जो वातावरण को प्रदूषण मुक्त करती हैं।[6]

यज्ञ में प्रयुक्त प्रत्येक द्रव्य यथा–समिधा, घृत, कस्तूरी, चन्दन, इलायची, जावित्री आदि तथा मिष्ठ पदार्थ की जब अग्नि में आहुति दी जाती है, तो उसके परमाणु सभी दिशाओं में फैलते हैं तथा वायु को प्रदूषण मुक्त करते हैं। श्रीमद्भागवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं अर्जुन से कहते हैं –''ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना करने के साथ सृष्टि की रक्षार्थ तथा पर्यावरण संरक्षण के लिए यज्ञ का विधान किया''–

सह यज्ञाः प्रजा सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोडिस्त्वष्टकामधुक्।।[7]

अतः पर्यावरण–शुद्ध के लिए आज भी सभी को अग्निहोत्रादि याग का विधान करना चाहिए।

जल संरक्षण

पर्यावरण के संघटक तत्त्वों मे दूसरा महत्त्वपूर्ण तत्त्व है– जल। जल में औषधियां हैं, उसमें अग्नि भी है जो विश्व के लिए कल्याणकारी है–

अप्सु मे सोमो अब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा।
अग्निं च विश्वशम्भुवम्।।[8]

जलसंरक्षण हेतु वेदों में कहा गया है–पृथिवी के मर्म स्थलों को क्षति न पहुँचाए।

जल के संरक्षण का भाव पद्मपुराण के क्रिया योगसार खण्ड के अध्याय–8 के श्लोक संख्या–8–13 तक प्राप्त होता है–

मूत्रं वाऽथ पुरीषं वा गÂातीरे करोति यः।
न द्रष्टा निष्कृतिस्तस्य कल्पकोटिशतैरपि।।
श्लेष्माणं वाऽपि निष्ठीवं दूषितां ष्वथु वा मलम्।
उच्छिष्टं कफकं चैव गÂागर्भे च यस्त्यजेत्।
स याति नरकं घोरं ब्रह्महत्यां च विन्दति।।[9]

अर्थातृ गंगा के जल में थूकना, मूत्र करना, कूड़ा–करकट डालना, गंदा जल डालना, गंगा किनारे शौचादि करना महापाप है, ऐसा करने वाला नरक में जाता है, और उसे ब्रह्म हत्या का पाप लगता है।

मनुस्मृति में बड़े–बड़े कारखानों को प्रदूषण का करण मानते हुए इन्हें लगाने का निषेध किया गया है।[10]

वृक्ष–वनस्पति के संरक्षण का भाव संस्कृति साहित्य में पदे–पदे परिलक्षित होता है। प्राच्य विज्ञान में वनस्पतियों को ओषधि कहा गया है क्योंकि ये ओष अर्थात् प्रदूषण को समाप्त करती है–

ओषं धयेति तत् ओषधयः सम्भवन्।[11]

शतपथ ब्राह्मण में ओषधियों को पशुपति कहा है–

ओषधयो वै पशुपतिः।[12]

भगवान् शिव इसलिए शिव कहलाते हैं, क्योंकि वे विष का पान स्वयं करते हैं तथा अमृत को प्रदान करतें हैं, ठीक उसी प्रकार वृक्ष वनस्पति कार्बन डाईऑक्साइड रूपी विष का पान करते हैं तथा ऑक्सीजन रूपी अमृत को हमें प्रदान करते हैं।

मनुस्मृति में कहा गया है कि कभी भी किसी एक वृक्ष से पत्र, पुष्प, तथा फलादि नहीं तोड़ना चाहिए। जिस वृक्ष से पत्र लेते हो उससे पुष्प न लें, जिससे पुष्प लेते हो उससे फल न लें–

यतः पत्रं समादद्यान्न ततः पुष्पमाहरेत्।
यतः पुष्पं समादद्यान्न ततः फलमाहरेत्।।[13]

इससे किसी एक वृक्ष को विनाश से बचाया जा सकता है। आज कार्बाइड आदि कृत्रिम साधनों के द्वारा असमय फलों को पकाया जा रहा है, यह भी पर्यावरण के प्रति घोर अत्याचार है, साथ ही मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक भी है। इसीलिए मनुस्मृति में कालपक्व फलों पर बल दिया गया है। प्रकृति अपने स्वाभाविक नियम के अनुसार पके हुए फल स्वयं प्रदान करती है। प्राकृतिक नियम से जो पत्ते झड़ जाएँ, लोग उन्हीं का प्रयोग करें।

वेदों के अनुसार पेड़–पौधों को अवैध रूप से काटना दण्डनीय अपराध था। यजुर्वेद में कहा गया है– औषधियों को हिंसित मत करो–

ओषधयस्ते मूलं मा हिंसीषम्।[14]

विष्णुस्मृति के 5वें अध्याय में वृक्ष काटने वालों के लिए दण्ड का विधान है–

फलद्रुमच्छेदी उत्तमसाहसं दण्ड्यः, पुष्पद्रुमच्छेदी मध्यमम्। वल्लीगुल्मच्छेदी कार्षापणशतम्।15

फल से युक्त पेड़ काटने वाले को उत्तम साहस (1000रू0 का) दण्ड, पुष्पों के पेड़ को काटने वालों को मध्यम साहस (500रू0 का) दण्ड, तथा झाड़ियों और लताओं को काटने वालों को शतम् (सौ रू0) का दण्ड विधान था। आज भी दण्ड का विधान तो है किन्तु उसका अनुपालन नहीं होता।

भारतीय संस्कृति में वृक्षों को पुत्र से भी अधिक महत्त्व दिया गया है। पद्म् पुराण के अनुसार–दश कुंओं के समान एक बावड़ी, दश बावड़ी के समान एक जलाशय, दश जलाशय के समान एक पुत्र तथा दश पुत्रों समान एक वृक्ष है –

दशकूपसमः वापी, दशवापीसमो ह्रदः।

दशह्रदसमः पुत्रो, दशपुत्रसमो द्रुमः[16]

स्वयं भगवान् ने भी अपने को 'अश्वत्थ कहा है'–

अश्वत्थः सर्ववृक्षाणाम्।[17]

तो फिर वृक्षों का अन्धाधुन्ध कर्तन क्यों हो रहा है? आज वनों की संख्या भी कम होती जा रही है जिसके कारण वन्य पशु भी अपने–आपको असुरक्षित महसूस कर रहा है।

संस्कृत वाङ्मय में पर्यावरण को विकृत करने वालों के लिए प्रायश्चित का भी विधान है–बिल्ली, नेवला, मेढ़क, कुत्ता, उल्लू, कौआ इन पशु–पक्षियों में से किसी को मार देने से प्रायश्चित करना पड़ता था। यदि इच्छा पूर्वक मारते तो शूद्र हत्या का प्रायश्चित्तथा और यदि संयोग वश किसी दण्ड–प्रहारादि से मर जाए तो तीन रात्रि तक केवल दूध पीकर या चार कोस पैदल चलकर या नदी में स्नान करके या वरूण सूक्त का जाप करके व्यक्ति शुद्ध होता था।[18]

इसी प्रकार सर्प, सूअर, हंस, आदि प्राणियों के वध का भी प्रायश्चित्त का भय दिखाकर वध का निषेध किया गया है। वर्तमान समय में प्रायश्चित्त परम्परा का सर्वथा अभाव दिखता है, किन्तु वन्य जीवों के संरक्षण के लिए कानून बने हैं तथा उनकी हत्या पर दण्ड का विधान है, लेकिन समाज का एक बड़ा वर्ग जागरूक नहीं है। आज भी दक्षिण भारत के किसी गाँव में तथा स्पेन में बैलों को परस्पर लड़ाना एक खेल का विषय है। ये सभी प्राणी मानव के उपकारार्थ परिवेश को अपने क्रिया–कलापों से शुद्ध करते हैं और हम उन्हीं को खेल का विषय बना रहे हैं, ये कहाँ तक उचित है?

आकाश–संरक्षण

आकाश को प्रदूषण–मुक्त करने के लिए मौन धारण को विशेष महत्त्व दिया गया था। शास्त्रों में यह भी कहा गया है कि जब भी बोलें तो कर्णप्रिय वाक्यों का ही प्रयोग करें। वैदिक विधि के अनुसार वैदिक मंत्रों का सस्वर मधुर ध्वनि से पाठ, भजन, कीर्तन आदि करने से ध्वनि प्रदूषण की समस्या को दूर किया जा सकता है।

निष्कर्ष

भारतीय संस्कृति के प्राचीनतम गन्थों में प्राकृतिक अनुराग एवं प्रकृति के संरक्षण की चिरन्तन धारा को यदि हम आज प्रवाहित करें तो पर्यावरण संरक्षण की दिशा में हमें पूर्ण सफलता प्राप्त होगी। हम प्रकृति की रक्षा करेंगे तो प्रकृति भी मनुष्य के सुख–दुःख में उसके साथ रहेगी। भारतीय संस्कृति में पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, वृक्ष तथा पशु–पक्षी आदि में देवत्व की अवधारणा संभवतः इसी उद्देश्य से की गयी होगी, क्योंकि हमारे महर्षि इस सत्य से परिचित थे कि ये प्राकृतिक संसाधन मानव जीवन के लिए आवश्यक है, यदि इनका अपव्यय किया गया तो एक दिन वह विनाशकारी होगा। अतः सभी मानव इस सांस्कृतिक धरोहर के प्रति श्रद्धावान् हों ताकि भारतीय संस्कृति का यह संकल्प पूर्ण हो सके–

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्चन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्।।

अंत टिप्पणी

1. *स्कन्द पुराण*
2. *मनुस्मृति, 1/49*
3. *यजुर्वेद, 36/17*
4. *अथर्ववेद, 12/1/35*
5. *ऋग्वेद, 10/137/3*
6. *वदों में विज्ञान, पृ0 278*
7. *श्रीमद्भगवद्गीता, 3/10*
8. *ऋग्वेद, 10/9/16*
9. *पद्मपुराण, 8/8–13*
10. *मनुस्मृति, 11/63–66*
11. *शतपथ ब्राह्मण, 2/2/5*
12. *वही, 6/1/3/12*
13. *मनुस्मृति, 6/2*
14. *यजुर्वेद, 1/25*
15. *विष्णुस्मृति, 5वाँ अध्याय*
16. *गीता, 10/26*
17. *गीता, 10/26*
18. *मनुस्मृति, 11/131*